



भीमाचार्य कुन्धुसागर प्रथमाला पुष्प नं० १



श्रीमत्परमपूज्य विद्वच्छिरोमणि प्रातःस्मरणीय दिगंबर  
जैनाचार्यश्रीकुन्धुसागरजीमहाराजविरचित

# लघुबोधामृतसार

[ संस्कृत, अंग्रेजी व हिंदी टीकासहित ]

प्रकाशक—

धर्मनिष्ठ मवाप्रभूषण

शेठ मोतीचंद्रजी सरिया, बांसवाड़ा.

*All rights reserved by the Granthamala.*

—\*—

द्वितीयावृत्ति

५०००

वाँ संवत् २४७१

सन् १९४४

{ बोधामृतपान.

# श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रन्थमाला.

बिज्ञाप—परमपूज्य आचार्यश्रीके द्वारा रचित ग्रंथोंका प्रकाशन व प्रचार करना व अनुकूलताके अनुसार इतर प्राचीन जैनग्रंथोंका उद्धार तथा प्रकाशन करना है।

## सामान्य नियम.

- १ इस ग्रंथमालाको जो सज्जन अधिकसे अधिक सहायता देना चाहेंगे वह सहर्ष स्वीकृत की जायगी।
- २ जो सज्जन १०१) या अधिक देकर इस ग्रंथमालाका स्थायी समासद बनेंगे उनको ग्रंथमालासे प्रकाशित सर्वग्रंथ पोस्टेज खर्च लेकर विनामूल्य दिये जायेंगे।
- ३ जो सज्जन ५१) या अधिक देकर हितचिंतक बनेंगे उनको पोस्टेज व अर्धमूल्य लेकर प्रकाशित ग्रंथ दिये जायेंगे।
- ४ जो सज्जन २५) या अधिक देकर सहायक बनेंगे उनको पोस्टेज व लागतमूल्य लेकर प्रकाशित ग्रंथ दिये जायेंगे।
- ५ अन्य सज्जनोंको निश्चितमूल्यसे दिये जायेंगे।
- ६ ग्रंथोंके मूल्यसे आई हुई रकमका उपयोग ग्रंथमालाके द्वारा प्रकाशित होनेवाले ग्रंथोंके उद्धार में ही होगा।
- ७ ग्रंथमालाके ट्रस्टडीड होकर मुंबईमें वह रजिस्टर्ड होचुका है।

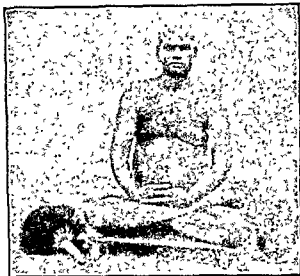
सहायता भेजनेका पता—सेठ गोविंदजी रावजी दोशी

ठि. रावजी सुखाराम दोशी, कोषाध्यक्ष, सोलापुर.

ग्रंथमालासंबंधी सर्व प्रकारका पत्रव्यवहार नीचे लिखे पतेपर करें

वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री

मंत्री—आचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाला, सोलापुर.



श्रीपरमपूज्य, पूज्यशरद, प्रातःस्मरणीय, जगद्गुरु, जगद्दाक,  
नरेंद्रपूज्य, स्वाध्यायनवाचस्पति, कविवर्य,  
वादीमकेसरी, विद्वच्छिरोमणि,  
आचार्यवर्य १०८ श्रीकुन्जुसागरजी महाराज.



## “ भूमिका ”

इस परिवर्तनशील संसारमें प्रतिदिन निरंतर प्रत्येक मानवको  
 टिए। “आया कहाँसे, जाना कहाँ और करना क्या”  
 इन तीन बातोंपर विचार करनेकी परम आवश्यकता है। दो सौ  
 वर्षोंमें वर्ष पहिलेका कोई भी मनुष्य आजकल दृष्टिगोचर नहीं  
 होता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता कि सर्व मानव नये आकर  
 इस संसाररूपी सपावमें बसे हैं। जब किसी अल्प स्थानसे जाना  
 सिद्ध हुआ तो जाना भी एक दिन अक्षय होगा। आया जखर  
 जोना भी जखर और करना भी नखर है। सकार्य करो या  
 या दुःकार्य करो। जानेके लिए पांच ही स्थान हैं याने गति हैं।  
 मरकगति, पद्मगति, मनुष्यगति, देवगति और पांचवी अंतिम  
 मोक्षगति है। इनके सिवाय और छठी कोई गति नहीं है। वायु-  
 निक काष्ठमें मनुष्य भी सवासो बरससे अधिक नहीं रह सकता  
 है। सदाके लिए न कोई रहा और न रहेगा। सब संशय, राग,  
 वैभव, इष्टमित्रादिक और कुटुंबवर्गाका समागम विपुल वेगके समान  
 या लड़के बुढ़बुढ़ा समान क्षणभंगुर मानो। करनीका फल अवश्य  
 भोगना ही पड़ेगा। भोगे बिना कमी छुटकारा नहीं होगा। इसलिए  
 प्रत्येक मानवको कर्तव्यपरायण बनकर, इस भूतलके उपर ऐसे  
 ऐसे अर्थोक्तिक कार्य करना चाहिए जिससे कोई भी मनुष्य भूखा  
 न मरे। अक्षरीनको अन्न देना, बसहीनको बस देना, स्थान  
 अर्थको स्थान देना। किसीकी निदा, बुलाई, तिरस्कार, अपमान  
 आदि न करेना यही सर्वत्रभोका सार है। इसके बिना जीवन भी  
 मरणतुल्य है। मानवजीवनकी शोभा इस भूतलपर देश विदेश  
 काठे गोरे आदिके भेदको सर्वथा छोड़कर प्राणिमात्रके हित

चिंतन करनेसे, उनके साथ प्रेम बनानेसे ही होगी। केवल अपने कुटुंबका पालन करना मनुष्यता नहीं होगी। यह तो पशुवृत्तिका परिधि देना है। क्यों कि पशु भी अपने कुटुंबका पालन करते हैं। इसमें कोई विशेषता नहीं। सत्कार्योंके द्वारा ही मनुष्य अपने जीवनको उन्नत और विकासमय बना सकता है।

जीवोंकी हिंसा करनेसे नरक आयुका बंध होता है, कुटिष्ठ और अशुभ परिणामोंसे पशु पर्याय का बंध होता है। और शुभाशुभ मिश्रित मावोंसे मनुष्य आयुका बंध होता है। और परोपकार परिणतिरूप शुभभावोंसे देवमायुका बंध होता है। इस प्रकार आत्मज्ञानरहित संसारी जीव आयु कर्मका बंध करते हैं। संसारमें परिभ्रमण कराने वाले और अतिशय दुःखको देनेवाले आयु कर्मका बंध प्रायः मोहसे होता है। इसप्रकार ऊपर कहे हुए मावोंसे रहित जीव है, वह किसी समय भी कर्मोंका बंध नहीं करता है।

इस ग्रंथमें आचार्यश्रीने वास्तविकतासे विश्वप्रेम और विश्वकल्याणकी भावना प्रदर्शित कर संसारको सभी शक्ति और सच्चा सुख प्राप्त करनेका मार्ग बतलाया है। यह ग्रंथ कोई जाति, कौम व समाज विशेष को लक्ष्य करके नहीं लिखा गया है, किंतु मानवमात्रके हितके लिए “अधुबोधामृतसार” नामक अनुपम ग्रंथकी रचना की। संसारमें ऐसे सद्गुरु और महारमाओंका जीवन केवल जगत्कल्याणके लिए ही होता है। अतः ऐसे निस्वार्थ परोपकारी, विश्वोद्धारक महारमाका संपूर्ण प्राणियोंको कृतज्ञ होना चाहिए। इसमें मानव जीवनकी सफलता है। गुरुचरणसरोजचंचरीक—

संजनकाक जैन पोस्टल आफिसियल रतठान,

# ••• अर्थकर्त्ताकः परिच्छेदः •••

महर्षि प्रातःस्मरणाय आचार्य श्रीकुमुदागरजी महाराजने इस ग्रंथकी रचना की है। आप एक परम प्रभावक बीतरागी, विद्वान् आचार्य हैं। आपकी जन्मभूमि कर्णाटक प्रांत है जिसे पूर्वमें कितने ही महर्षियोंने अर्द्धकृत कर जैनधर्मका मुख उज्ज्वल किया था। इसलिये “ कर्णेणु जटतीति ” शार्ङ्गक नामको वाकर सबके कानोंमें गूंज रहा है।

कर्णाटक प्रांतके ऐश्वर्यमय बेलगाव जिल्लेमें ऐनापुर नामक सुंदर नगर है। वहांपर चतुर्थशतकमें छद्मामय्यत अर्थात् सात स्वभाववाले सातप्या नामक आशकोटम रहते थे। आरकी धर्म-पानी साश्वात् सरस्वतीके समान सद्गुणसंपन्न थी। इसलिये सरस्वतीके नामसे ही प्रसिद्ध थी। सातप्या व सरस्वती दोनों अर्थात् प्रेम व सहाइसे देवपूजा व गुरुपार्षित आदि साकार्यमें सदा मग्न रहते थे। धर्मकार्यको वे प्रधानकार्य समझते थे। उनके हृदय में आंतरिक धार्मिक श्रद्धा थी। श्रीमती श्री. सरस्वतीने संवत् २९२० में एक पुत्ररत्नको जन्म दिया। इस पुत्रका जन्म कार्तिक शुक्लपक्षकी द्वितीयाको हुआ। मातापिताओंने पुत्रका जीवन सुसंस्कृत हो इन सुविचारसे जन्मसे ही आगमोक्त संस्कारोंसे संस्कृत किया। 'जातकर्म संस्कार - होनेके बाद' शुभमुहूर्तमें नामकरण संस्कार किया जिसमें इस पुत्रका 'नाम - रामचंद्र रक्षा गया। बादमें चौडकर्म, अश्वराम्यास, पुस्तकपूजा आदि आदि संस्कारोंसे संस्कृत कर सद्दिशाका अध्ययन कराया। रामचंद्रके हृदयमें बाळकाठसे ही चिन्त, शौच व सदाचार आदि भाव



जागृत हुए थे । जिसे देखकर लोग आश्चर्ययुक्त व संतुष्ट होते थे । रामचंद्रको बाल्यावस्थामें ही साधु संन्यासियोंके दर्शनमें लाकर इच्छा रहती थी । कोई साधु ऐनापुरमें जाते तो यह बालक दौड़कर उत्तकी बंदनाके लिए पहुंचाता था । बाल्यकालसे ही इसके हृदयमें धर्मके प्रति अभिरुचि थी । सदा अपने सहधर्मियोंके साथ तत्त्वचर्चा करनेमें ही समय बिताता था । इस प्रकार सोलह वर्ष व्यतीत हुए । अब माता पितापिताओंने रामचंद्रको विवाह करने का विचार प्रगट किया । नैसर्गिक गुणसे प्रेरित होकर रामचंद्रने विवाहके लिए निषेध किया एवं प्रार्थना की कि पिताजी ! इस औक्तिक विवाहसे मुझे संतोष नहीं होगा । मैं औक्तिक विवाह अर्थात् मुक्तिदर्शकीके साथ विवाह कर लेना चाहता हूं । मातापिताओंने पुनश्च आमह किया । मातापिताओंकी आह्वोल्लेखनभयसे इच्छा न होते हुए भी रामचंद्रने विवाहकी स्वीकृति दी । मातापिताओंने विवाह किया । रामचंद्रको अनुभव होता था कि मैं विवाह कर बड़े बंधनमें पड़ गया हूं ।

विशेष विषय यह है कि बाल्यकालसे संस्कारोंसे सुदृढ होने के कारण यौवनावस्थामें भी रामचंद्रको कोई व्यसन नहीं था । व्यसन था तो केवल धर्मचर्चा, सासंगति व शास्त्रस्वाध्यायका था । बाकी व्यसन तो उससे घबराकर दूर भागते थे । इस प्रकार पच्चीस-वर्ष पर्यंत रामचंद्रने किसी तरह घरमें वास किया । परंतु बीचबीचमें यह भावना जागृत होती थी कि भगवन् ! मैं इस गृहबंधनसे कब छुटूँ ? जिनदीक्षा लेनेका मार्ग कब मिलेगा ? यह दिन कब मिलेगा जब कि सर्वसंगपरिषागकर मैं स्वपरक-व्यापण कर सकूँ ?

देववशात् इस बीचमें मातापिताओंका स्वर्गवास हुआ । विक-  
राज काठकी कुमारी माई और बहिनने भी विदा ली । तब  
रामचंद्रजीका विषय और मी उदास हुआ । उनका बंधन छूट  
गया । तब संसारकी अस्थिरताका उन्होंने स्वानुभवसे पक्का निश्चय  
करके और मी धर्ममार्गपर स्थिर हुए ।

रामचंद्रके शत्रु मी घनिकू ये : उनके पास बहुत संपत्ति  
थी । परन्तु उनको कोई संग्राम नहीं था । वे रामचंद्रसे कई दफे  
कहते थे कि यदि संपत्ति ( घर वगैरह ) तुम ही ले लो, मेरे यहां  
के सब कारोबार तुम ही चलाओ ; और रामचंद्र अपने शत्रुको  
दुःख न हो इस विचारसे कुछ दिन रहा मी ; परन्तु मनमनमें  
यह विचार किया करता था कि " मैं अपना भी घरदार छोड़ना  
चाहता हूँ । इनकी संपत्तिको लेकर मैं क्या करूँ " । रामचंद्रकी  
इस प्रकारकी वृत्तिसे शत्रुको दुःख होता था । परन्तु रामचंद्र  
लाचार था । जब उसने सर्वथा गृहत्याग करनेका निश्चय ही  
कर लिया तो उनके शत्रुको बहुत अधिक दुःख हुआ ।

आपने श्रीपरमपूज्य आचार्य मी शान्तिसागर महाराजके पाद  
मूत्रको पाकर अपने संकल्पको पूर्ण किया । सन् १५ में अण-  
बेळगोडाके मस्तकामियैकके समय पर आपने झुंझक शिक्षा ली व  
सोनानिर क्षेत्रर मुनिशिक्षा ली । और मुनि कुंजुसागरके आश्रमसे  
प्रसिद्ध हुए । जब आप घर छोड़ करके साधु हुए तब आपकी  
धर्मपत्नी धर्मप्यान करती हुई घरमें ही रही ।

आपने अपनी झुंझक म ऐंठक अवस्थामें बहुतही धर्मपना-  
पनके कार्य किये हैं । संस्कारोंके प्रसारके लिये सतत प्रयत्न

किया है । आपने मुक्ति अवस्थामें उत्तरप्रांतके अनेक स्थानोंमें विहार कर धर्मकी जागृति की है । गुजरात व बागड प्रांत जो कि चरित्र व संयमकी दृष्टिसे बहुत ही पीछे पड़ा था, उस प्रांतमें छोटेसे छोटे गावमें भी विहार कर लोगोंको धर्ममें स्थिर किया है ।

आपमें स्वपरकरुपाणकारी निर्मल ज्ञान होमके कारण आप सर्वजनपूज्य हुए हैं । आपकी जिस प्रकार प्रंचरचना कळामें विशेष गति है, उसी प्रकार वस्तुवकळामें भी आपकी दयाति है । धोताओंके हृदयको आकर्षण करनेका प्रकार, वस्तुस्थितिको निरूपण कर भयोंको संसारसे तिरस्कार विचार उत्पन्न करानेका प्रकार आपको अच्छी तरह अवगत है । आपके गुण, संयम आदियोंको देखनेपर यह कहे हुए बिना, नहीं रह सकते कि आचार्य शतिसागरजी महाराजने आपका नाम कुंपुष्पागर बहुत सोच समझकर रक्खा है ।

आपने अपनी माता सरस्वतीका नाम सार्थक बनाया है । क्योंकि आप अपने नाम तथा काममें सरस्वतीपुत्र ही सिद्ध हुए हैं । चतुर्विंशतिजिनस्तुति, शतिसागर चरित्र, बोधामृतसार, निजाम-शुद्धिभाषना, मोक्षमार्गप्रदीप, ज्ञानामृतसार, स्वरूपदर्शनसूर्य, मरेशधर्मदर्पण मनुष्यकृत्यसार, शतिसुधासिंधु आदि नीतिपूर्ण रचय-मितं ४० प्रंचरनोंकी उत्पत्ति आपके ही अगाधज्ञानरूपी खानसे हुई है, हो रही है और होती रहेगी ।

आपके दुर्लभ संस्कृतभाषा-पांडित्यपर बड़े २ विद्वान् पंडित भी मुख हो जाते हैं । आपकी प्रंचनिर्माणशैली अपूर्व है । वर्णन-कौशक्य निराळा है । अग्रिम विषयोंको आधुनिक ढंगसे

स्पष्टीकरण करनेमें आप सिद्धरूप हैं । आपकी भावण-प्रतिभा, शान्त व गंभीर मुद्राके सामने बड़े २ राजाओंके परतक झुकते हैं । गुजरात, प्रांतके प्रायः सभी संस्थानाधिपति आपके आज्ञाकारी शिष्य बने हुए हैं । अस्तक इमारतोंकी संरक्षामें जेनेतर आपके सद्बुद्धेशमें प्रभावित होकर, मन्त्राश्रय (मघ, पाँच, पदिरा) के नियमी व यनी बन चुके हैं । गुजरात, व बांगड प्रांतमें आपके द्वारा जे धर्मप्रमाथना हुई है व हो रही है वह इतिहासके पृष्ठपर सुवर्णवर्णोंमें चिरकाष्ठतक अंकित रहेगी । गुजरातमें, कई संस्थानिकोंने अपने राज्यमें इन तपोधनके जन्मदिनके स्मरणार्थ सार्वजनिक छुट्टी व सार्वत्रिक अहिंसादिन मनानेके फर्मान निकाले हैं । सुदासना स्टेटके प्रजाशसक नरेश तो इतने मजबूत बन गये हैं कि महाराजका जहा २ विहार होता है वहाँ प्रायः उनकी उपस्थिति रहती है । कमी अनिवार्य राज्यकार्यसे परवश होकर महाराजसे बिदा लेनेका प्रसंग आनेपर माताको बिछुडते हुए पुत्रके समान नरेशकी आज्ञामेंसे आज्ञा बहते हैं । धन्य है ऐसी गुहमक्ति ! सुवराज कुमार सादेव रणजीतसिंहजी पूष्यवर्षके परममज्ज है । वे कई समय महाराजकी सेवामें उपस्थित होकर अश्वमेधके तस्वोंको पूछते हुए महाराजकी सेवामें ही दीर्घ समय स्थलीत करते हैं । तारंगानासे महाराजका विहार होनेका समाचार जानकर कुमार सादेवसे रहा नहीं गया, वे पूष्यवर्षके शरणमें उपस्थित होकर ( अश्रुगत करते हुए ) महाराजसे निवेदन करते हैं कि स्वामिन् ! पुन कब दर्शन मिलेगा ! कितनी अहृतमक्ति है यह ! पूष्यवर्षने आज गुजरातमें जो धर्मभाग्यति की है वह " न मृतो न मविष्यति " है । गुजरातमें जैन वषा, जेनेतर

क्या; हिंदू, क्या, मुसलमान क्या, उनके चरणोंके भक्त हैं। आज पूज्यश्रीका स्थान बहुत ऊंचा है। जलंधरा, माणिकपुर, वेपपुर, हंगरपुर, बांसवाड़ा खांदु आदि अनेक राज्योंके अधिपति आपके सद्गुणोंसे मुग्ध हैं। पिछले दिन बड़ोदा राज्यमें आपका अर्घ्य आगत हुआ। राज्यके न्यायमंदिरमें स्टेटके प्रधान सर-कृष्णमाचारीकी उपस्थितिमें आचार्यश्रीका सार्वजनिक तारोपदेश हुआ।

आप भगवान् समंतमद्र जिनसेनादिका स्मरण दिखाले हैं। जो लोकोपकारका कार्य महर्षि कुंदकुंद, प्रभाचंद्र अरुठक, मेमिचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती आदिने किया था वह इस समय अपने आचार्य कुंथुसागरजी महाराज कर रहे रहे हैं। इस समय आपके द्वारा वाग्दर प्रांतमें जो भेतना हुई है वह आशातीत है। इस पिछले हुए-प्रांतमें बीसों वर्षोंमें होनेवाला सुधार कुछ महिनोमें होगया है। ऐसे महाविभूतियोंसे ही धर्मका मुक्त उज्वल होता है। ऐसे प्रांत स्मरणीय पूज्य महर्षिके चरणोंमें त्रिकाळ अनगत नमोस्तु है।

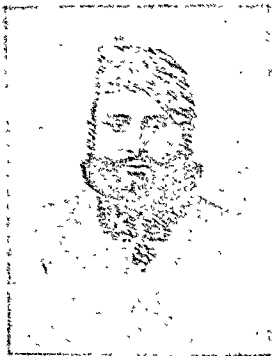
प्रकृत ग्रंथ लघुबोधामृतसार जो आपके समक्ष है, पूज्य आचार्यश्रीके द्वारा विरचित है।

### ग्रन्थ-परिचय.

यह लघु-बोधामृतसार नामक १० श्लोकोंका छोटासा ग्रंथ-सांसारिक चतुर्गति और अंतिम निर्वाणगतिकी वास्तविकता तथा जीवका कर्तव्य जाननेके लिए महान् उपयोगी है। अतः संपूर्ण मनुष्य समाजके लिए अध्ययन और मनन करने योग्य है। इसका अनुभव कर यह जीव पंचमगति [मोक्ष] प्राप्त कर सकता है।

विनीत-गुरुचरण सेवक-वर्धमान पार्थनाथ शास्त्री  
मंत्री-श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमाळा.

— श्री १०० —



श्री १००

श्री १००

बुधबोधामृतसार—

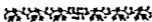


श्रीमती धर्मचंद्रिका  
जटावर्पाईजी घांसवादा

## द्वितीय आवृत्तिके प्रकाशक

धर्मरत्न, समाजभूषण, सेठ मोतीचंदजी सरियाका

### संक्षिप्त परिचय ।



सेठ मुकुंदजी धनराजजीके परिव्र वंशमें सेठ चंदाकाठजीके कुटुंबीयक पुत्र राय-साहिब विजयचंदजी गण्यमान व्यक्ति हो गये हैं । आप सोसवादा स्टेट व वाय्वर प्रांतके भूषण थे । धीरता धीरता और धार्मिकता आदिमें वे ख्यातिप्राप्त व्यक्ति थे । राज्यमें भी आप सम्मानित सेठ थे । भारत सरकारने आपको " राय-साहिब " की पदवी प्रदान की थी । आपने संवत् १९७६ में २७०००) का दान कर बोडिंग स्थापित की थी जो कि आपके जीवन काठमें अष्टा कार्य करती रही । आपने अपने जीवन काठमें इस चंचलदरमीका कई प्रकारसे अपने हाथों लाखों रुपयोंका दान किया ।

सांठु राज्यमें दोनेवाडी दशहरेकी दिसा [ १०६ मेंसोंके वार्षिक वचको] हजारों रुपये खर्च करके आपने बंद करवा दी है । इसके लडावा आपने और १२ गांवोंमें भी कई जीवोंकी दिसा सदाके छिपू बंद करवाई है ।

सांश यह कि बटे बडे धार्मिक, सामाजिक और राजकीय कार्योंमें आपका पूरा सहयोग रहता था । ऐसे नरपुंगव सेठ विजयचंदजीके सुपुत्र सेठ मोतीचंदजी सरिया हैं ।

आपका जन्म ग्रेष्ठ शुक्ल ८ थी. संवत् १९६८ में हुआ है । १३ वर्षकी अवस्थामें ही आपको पितृभ्रमसे वंचित रह जाना



पदा; उस समय आपके छोटे भाई महीपालजीकी अवाप ९ वर्षकी थी ।

आपकी सुयोग्य, नीति-परायण, धर्मचंद्रिका माता जडाव-बाईजीने आपके छाजन, पालन व शिक्षणका सुप्रबंध रक्खा । तथा स्टेट व गृहस्थी की सहायता भी मुनीम आदिके सहयोगसे करने लगी । फिर भी छोटी अवस्थासे ही सेठ मोतीचंद्रजीको गृहस्थीका भार उठाना पडा ।

जिस प्रकार शीरता, धीरता आदिका प्रतिबिंब आपपर आप के पिताका था, उसी प्रकार धार्मिकता, आदि कई गुणोंका प्रभाव आपपर माताका था ।

आपकी मातुश्री धर्मचंद्रिका जडावबाईजी आशकके गुणोंसे परिपूर्ण पूजा, स्वाध्याय, सामायिक, धर्मचर्चा आदि धार्मिक कार्योंमें सदा तत्पर और सावधान रहती है । आपको धार्मिक ज्ञान भी अच्छा है । आप अपना शुद्ध मोहन अति सावधानी-पूर्वक अठग ही बनाती है और उदासन वृत्तिसे रहती है ।

ऐसी सुयोग्य माताका सेठ सां. पर भारी प्रभाव है और आप हैं थी मकि बडे ही आज्ञाकारी पुत्र ।

गत वर्ष बीसवाडामें महाराज कुंथुसागरजीका जो चातुर्मास हुआ उसका प्रधान छेप सेठ साहिबको ही है । चातुर्मासमें संघकी जो वैपावृत्ति और व्याख्यान आदि करानेका जो सुप्रबंध आपने किया वह अति प्रशंसनीय है । आपने महाराजके उप-देशोंसे प्रभावित होकर समाज व धर्मसेवाके लिए अपनी शक्ति लगादी है ।

उपरोधानुसार—



श्री धर्मनिष्ठ गुरुमठ  
सेठ मोतीचंदजी सरिया, यासबादा.

उपबोधामृतसार —



श्री धर्मनिष्ठ गुरुमक  
सेठ महीशचन्द्रजी सरिया, बांसवाडा.

दिगंबर जैम बोर्डिंग बोलवाडा  
। पुनः अच्छे रूपमें चाख

करमें भी आपको प्रधान भेष है ।  
को भी आपने एकमुस्त ५००१)  
। इस तरह संघाओंके संचालन  
(२००००) रु.कादान कर चुके हैं.  
प वाग्धर प्राप्तके सटारमें कर रहे  
प प्रतिदिन कुछ न कुछ सोचा

में जो सेवक मंडल तैयार हुए हैं  
ही कार्य है । आप एक आगृत  
वायका सासाह अपार है, जिस कार्य  
प्रोदते हैं । आप इस प्रांतके चमकते  
व्यक्ति उन्हें सहयोगी मित्र जाय  
ी सकता है ।

भी बहुत ही सरस, सरल, सादा,  
गुणमाइकता गुण मविष्यमें उन्हें  
कर सकता है ।

दिख तक ही हुई है, फिर भी  
। इसीसे आप इस समय निम्न  
ताक रहे हैं—

दुष्प्रसिद्धिप्रसूतसार —



श्री धर्मनिष्ठ गुरुमठ  
सेठ महीपाळजी सरिया, बांसपाटा.

दुष्प्रसिद्धिप्रसूतसार

श्री सेठ चंपाचाल बिलवचंद दिगंबर जैन बोर्डिंग बल्लवादा जो अन्वयवसियत टंगपर चल रहा था पुनः लुप्त रूपमें चालू कर दिया है ।

कन्याशालाको संचालित करनेमें भी आपको प्रधान श्रेय है ।

कुंथुसागर स्काउटशिप फंडको भी आपने एकमुस्त ५००१) रु. प्रदान कर चालू किया है । इस तरह संघाओंके संचालन आदिमें आप गत वर्ष लगभग २००००) रु. कादान कर चुके हैं. और सबसे बड़ा कार्य तो आप वाग्घर प्रान्तके उद्वारमें कर रहे हैं । प्रान्तके उद्वारके लिए आप प्रतिदिन कुछ न कुछ सोचा करते हैं । किया करते हैं ।

वाग्घर प्रान्तके माम माममें जो सेवक मंडल तैयार हुए हैं उनमें जागृति लाना आपका ही कार्य है । आप एक आगृत कर्मठ और धनी युवक हैं । आपका वासाह अपार है, जिस कार्य में भिड़ जाय उसे करके ही छोड़ते हैं । आप इस प्रान्तके चमकते खितारे हैं । यदि ऐसे ही कुछ व्यक्ति उन्हें सहयोगी मिल जाय तो प्रान्तमें आशातीत सुधार हो सकता है ।

आपका व्यक्तिगत जीवन भी बहुत ही सरल, सरल, सादा, व्यवहारपटु और मिठनसार है, गुणप्राप्तता गुण मविष्यमें उन्हें बहुत ही उच्च पदपर आसीन कर सकता है ।

आपकी शिक्षा हिंदीमें मिट्टिल तक ही हुई है, फिर भी योग्यता और प्रतिभा अथार है । इसीसे आप इस समय निम्न संघाओंके समायति पदको सम्हाल रहे हैं—

- श्री वाग्धर प्रान्तीय दि. जैन समा वासवाडा  
 ,, वाग्धर प्रान्तीय दि. जैन महामंडळ ,,  
 ,, दि. जैन महावीर मंडळ ,,  
 ,, वाग्धर प्रांतीय दि. जैन कुंधुसागर

स्काउटशिप फंड वासवाडा.

- ,, कुंधुसागर जैन कन्या पाठशाळा ,, "  
 ,, रायसाहब सेठ सभिया चम्पाराल. "  
 विजयचंद बोर्डिंग हाऊस ,,

तथा वासवाडा स्टेटके आप वेंकर भी हैं ।

आपने अपने थोड़ेसे जीवन काठमें ही निम्न लिखित महान धार्मिक कार्य किये हैं—

- (१) ऋषभदेव मंदिरमें ध्वजादंड आपने नया सब कार्य करके चढाया ।
- (२) वाग्धर प्रान्तमें सिद्धचक्र विधान दो बक्त बडे ही। उसमें से हजारो आदमियोंको एकत्र कर किया है, सिद्धचक्र विधानकी मददमा इस प्रान्तमें सर्व प्रथम प्रकारकी ।
- (३) घरपर बने चैत्यालयकी वेदी प्रतिष्ठा ।
- (४) नरसिंहपुरा मंदिर वासवाडाका जीर्णोद्धार ५ पंच-कल्याणक प्रतिष्ठा.
- (५) कल्याणपुर [ कुंवाळा ] मंदिरकी पंचकल्याण प्रतिष्ठा.
- (६) फाल्गुन शुक्ल ३ वीर सं. २४७१में कळोजरा मंदिर की होनेवाली पंचकल्याणक प्रतिष्ठाका भार भी आप ही प्रधानतया संभालेंगे ।

आपने श्री सेठ च. वि. दि. जैन बोर्डिंग बांसवाडाका धुव फंड बढ़ाकर गत वर्ष (१९०००) का कर दिया है।

उपर्युक्त कार्योंके उपलक्ष्यमें समानने आपको " धर्मरत्न व समाजभूषण " के पदसे अलंकृत किया है और आपकी माताको धर्मचन्द्रिकापदसे विभूषित किया है।

आपके छोटे माई महांपाछत्रा सराया मी आपके कार्योंमें सहयोग देते रहते हैं। इसीसे अपनी बड़ी माई स्टेटका संबंध दूकानोंका संचालन उत्तम रीतिसे करते हुए भी सामाजिक और धार्मिक कार्योंमें अग्रसर रहते हैं। आप दोनों माई राम-छत्रमणके समान बड़े प्रेमसे रहते हैं।

आपके इस समय ३ संतान [ २ पुत्रियाँ और १ पुत्र है ] बड़ी सुपुत्रीका नाम ' रमणकान्ता ' व छोटीका ' गुणसुन्दरी ' व पुत्रका नाम ' हरिश्चंद्र ' है। संतानकी शिक्षाका आप पूरा ध्यान रखते हैं।

सारांश यह है कि आप एक विशेष पुरुष हैं जिनसे समान को कई आशाएँ हैं।

आपने परमश्रेष्ठ परम तपोनिधि विश्वबंध विद्वग्निर्गोमाण, नरेन्द्रबंध, चाण्डिप्र चूडामणि आचार्य १०८ कुंथुसागरजी महाराज के ग्रंथ " लघुबोधामृतसार " की द्वितीय आवृत्तिका प्रकाशनका जो मार किया है वह आपकी गुह्यमक्तिके अनुरूप ही है अन्य महाशयोंको आपका अनुकरण करना चाहिए।

गुणानुगामी—

जवाहरलाल जैन बांसवाडा.



# चित्र-परिचय ।

—:o[~~~~~]o:—

श्री रा. सा. सेठ विजयसिंहजी यासवादा.

आप यावर प्रांतके एक चमकते हुए नररान हुए हैं । आप का सार्धजनिक व राजकीय क्षेत्रमें बहुत बड़ा प्रभाव था । आप दानवीरताके लिए प्रसिद्ध थे ।

श्रीमती धर्मचंद्रिका जटावर्माजी—

आप स्व. सेठ विजयचंद्रजीकी पत्नी व सेठ मोतीचंद्रजी सरियाकी माता हैं । आप धर्मप्रेमी, गुरुभक्ता हैं । चातुर्मासके समय आपने आचार्यसंघकी अपूर्व सेवा की ।

श्री सेठ मोतीचंद्रजी सरिया—

यावर प्रांतके धर्मवीर युष्करान व सेठ विजयचंद्रजीके विनयशील ज्येष्ठपुत्र हैं । धर्मकार्यमें सदा अगुवार रहते हैं । अनेक संस्थाओंके संचालक हैं । दानकार्यमें भी अपने पिताका अनुकरण करते हैं ।

श्री सेठ महीपादजी सरिया—

सेठ मोतीचंद्रजीके लघुभ्राता, धर्मप्रेमी और गुरुभक्त हैं । अपने माईके समान ही सदा धर्म व समाजकार्य में भाग लेते हैं, ठास्राही नवयुवक हैं । मिछनसार हैं ।

आपका समस्त परिवार सुखसंपत्तिसे समृद्ध हो यह हमारी मायना है ।

२१३१

वर्षमान पार्श्वनाथ शास्त्री  
मंत्री—आचार्य कुंभुसागर मंथमाटा,

॥ श्रीश्रीतरांगाय नमः ॥

विश्वबंध श्रीमदाचार्यकुन्धुसागरविरचित

# लघुबोधामृतसार ।



मंगलाचरण.

ज्ञानमानुं जितं नत्वा, श्रीदं स्वर्माक्षयायकम् ।

लघुबोधामृतं सारं, वक्ष्ये सहोद्यहेतवे ॥ १ ॥

संस्कृतार्थः—गुह्यज्ञानसूर्यं श्रीतरांगपरमदेवं नाथा सकलैश्वर्य-

प्रदायकमभ्युदयनिधेयसहायकम् लघुबोधामृतसारं मन्वानां बोधहेतवे

वक्ष्ये इति प्रतिज्ञां करोत्याचार्यः ॥ १ ॥

## THE AUSPICIOUS PRAYER.

Having bowed to Jina [ God ], the sun of knowledge, who gives wealth and final beatitude. I (Kunthusagar) tell a short essence of nectar of advice to enable the good for its achievement. (1)

अर्थः—गुह्यज्ञानसूर्यं श्रीतरांग परमदेव भगवंतको नमस्कारं कर आचार्य ग्रंथ-निर्माणकी प्रतिज्ञा करते हैं ।

कुत्रागतोऽहं गमनीयमस्ति, कुतः सदा किं करणीयमेयं ॥

संसारवृत्तांतविदा नरेण, संदेव चित्ते खलु चिंतनीयं ॥२॥

संस्कृतार्थः—स्वपराहितमभिप्राशुञ्जन् मवभ्रमणदुःखमनुमषन्

प्रापश्चमारहितैषिणा एवं चिंतनीयम्, अहं कुत्रागतः, केन भवेताह-

मत्रागतः, कुत्र च गमनीयमस्ति, क्व गतौ गमनीयमस्ति, अत्र च मनुष्ये

मये किं कर्तव्यमस्ति ॥ २ ॥

Where have I come, where I am to go, what is

worth to be done; a learned man should always consider these matters regarding the world. (2)

अर्थ—अपने हितको चाहनेवाले मनुष्यको प्रतिनित्व के कहांसे आया हूं, कहां जाना है और यहांपर मेरा कर्तव्य क्या है ? इत्यादि विषयोंका विचार अवश्य करना चाहिए ।

इस संसारमें समस्त भोगोपभोग पदार्थ नाशशील हैं । इष्टविद्योग अनिष्टसंयोग का संबंध इस आत्माको प्रतिसमयमें होता रहता है । जब कि पदखंडवैभवभोगी चक्रवर्तिकी अखंड संपत्ति, अन्यदुर्लभ श्रीतीर्थैकरपरमेष्ठीकी विभूतिपां, और बलभद्रादि महापुरुषोंके सर्व वैभव भी नाशशील हैं, फिर हम लोगोंकी नश्वरसंपत्तिका तो कहना ही क्या है ? क्या वह स्थिर रह सकती है ! प्रातःकालमें सुखसे स्थित मनुष्य शाम को मरणोन्मुख होता है । सवेरे पुत्रजन्मसे हसीसुशी मनानेवाले मनुष्य दुपहरको पुत्रविद्योगसे दुःखसमुद्रमें गोते छगाते रहते हैं । यह जीवन जलबुद्बुदके समान है । परन्तु यह प्राणी इसके रहस्यको न समझकर मोह और अज्ञानके वशीभूत होकर यह शरीर, जीवन, पुत्रमित्रादिबांधव और समस्त संपत्तिको स्थिर समझकर इस संसारमें परिभ्रमण करता रहता है ।

यह मनुष्य पर्याय ही सब पर्यायोंमें श्रेष्ठ है । इसी भवमें आकर यह जीव अपने शुभाशुभकर्मानुसार जिस तरह नरक, तिर्यच, मनुष्य और देवगतिपोंका टिकेट लेता है, उसी तरह संपूर्ण कर्मोंको नाश करके शिवपदको भी प्राप्त कर सकता है । परंतु ये सब इस मनुष्यके कर्तव्य और भावनापर निर्भर है ।

भो शुरो ! कीदृशो जीवो नरकं याति सत्वरम् ?

Question—Oh I preceptor I tell me which being goes to hell ?

प्रश्न—हे गुरु । ऐसा जीव क्षीर ही नरक पहुँचता है ?

अन्यत्रकोपी कटुकमभाषां, धर्मस्य देवस्य गुरोर्विरोधी ।  
 भूतः शठः प्राणिषु च मृत्तं, द्रोही च वधो कुलजानिलोपौ  
 मनादिधर्मेषु सदा रतानां, सुभायकार्णां न्यन्तु निन्दको यः ।  
 श्लोक्तमावैरिति यद्य युक्तः, स एव पापी नरकस्य गामी

संस्कृतार्थः—तीक्ष्णवाक्ययुक्तः, कटोरवचनप्रयोगी, देवस्य तथा  
 अधिपतिस्तथाकद्विष्ठाधर्मस्य गुरोरेव निन्दक, भूतः, पराधकारे निरतशठः,  
 जनां केषु मृत्तः, हिंसकः, रक्षार्थवानां द्रोही, खेष्टाचारमाच-  
 न् कुलजातिवर्षादाओवकः, सत्प्राप्तदानदेववृत्तादिसंश्लेषेषु रतानां  
 रतानां सदा दुश्का, पापी तीक्ष्णशुभकर्मोदपाशतनिदिष्टं अधगति  
 ति ० ३-४ ॥

That sinful man goes to hell who at once becomes  
 angry; who speaks bitter words; who objects to  
 religion, God and the preceptor; who is a cunning rogue;  
 who is inclined to kill animals; who is treacherous to  
 his fellowmen and who wants to destroy the family  
 and the caste; and who always reproaches the good  
 house-holders who take interest in duties such as  
 living donation etc. and the one who possesses bad  
 feelings in his mind, as are mentioned above (3-4)

अर्थ—जो अत्यंत क्रोधी है, कटुक भाषण करनेवाला है  
 जो देव, धर्म और गुरुका विरोधी है, जो भूत है, मूर्ख है,  
 प्राणियोंकी हिसासे सदा मृत्त रहता है, जो अपने भाई वधु-  
 रोही है, जो कुल और जातिको खोप करनेवाला है और

जो दान पूजा आदि धर्ममें सदा छीन रहनेवाले श्रेष्ठ श्रावकों की सदा निंदा करता रहता है, जिस जीवके ऊपर सखे रूप भाव विद्यमान रहते हैं वही जीव पापी और नरकगामी सप-क्षना चाहिए।

प्रश्न—कितने वर्षों तक जीव नरकगतिमें रहता है ?

उत्तर—ब्रह्मण्ड ३३ सागरवर्ष पर्यंत, जघन्य दस हजार वर्ष पर्यंत और मध्यम अपनी स्थितिके अनुसार अर्थात् दस हजार वर्षोंसे लेकर अन्तर्गृहर्तृपिभागक्रमसे तैर्तीस सागर वर्ष पर्यंत अपनी २ स्थितिके अनुसार वर्षापर रहता है।

प्रश्न—कोटाकोटी किसे कहते हैं ?

उत्तर—एक कोटीसे एक कोटीको गुणाकार करनेपर जं लब्ध आता है उसे कोटाकोटी कहते हैं।

प्रश्न—सागर किसे कहते हैं ?

उत्तर—दस कोटाकोटी अद्धारपत्यको सागर कहते हैं।

प्रश्न—अद्धारपत्य किसे कहते हैं ?

उत्तर—दो हजार कोश गहरे और दो हजार कोश चौड़े गोष्ठ गड्ढेमें कैचीसे जिसका दूसरा भाग न हो सके ऐसे मेंढके पाछोंको भरना। जितने बाल उममें समावे, उनमेंसे एक एक बालको सौ सौ वर्ष पाद निकालना। जितने वर्षोंमें वे सब बाल निकल जावे, उतने वर्षोंके जितने समय हो उसको व्यव-हारपत्य कहते हैं। व्यवहारपत्यसे असंख्यात गुणा उद्धारपत्य होता है। उद्धारपत्यसे असंख्यात गुणा अद्धारपत्य होता है।

प्रश्न—नरकगतिमें किस तरह दुःख भोगना पड़ता है ?

उत्तर—नरकमें रहनेवाले नारकी जीव सदा अशुभतर

खेदवावाले, अशुभतरं परिणामवाले, अशुभतर देहके धारक अशुभतर वेदनावाले और अशुभतर विक्रिया करनेवाले होते हैं। निरन्तर अशुभकर्मका उदय रहनेके कारण उनके परिणाम आदि सदा अशुभ ही रहते हैं। नारकी जीव परस्पर कुत्तोंकी तरह निरन्तर छटते झगड़ते रहते हैं और अर्थावरीप जातिके संहिष्ट परिणामवाले अमुरोंके द्वारा भी दुःखी किये जाते हैं अर्थात् जिस प्रकार लोकमें अनेक अज्ञानी पुरुष मँटे, भैंस हाथियोंको मद्य पिछाकर परस्पर छटाते हैं और उनकी धार-नीतिसे आनंद मानते हैं वा तमाशा देखते हैं। उसी प्रकार तीसरे नरक तकके नारकी जीवोंका दुष्ट कौतुकी देव अवधि-ज्ञानसे उनके पूर्व वैरोंका स्मरण कराकर परस्पर छटाते तथा दुःखित करते रहते हैं और आप तमाशा देखते हैं और भी अनेक प्रकारके दुःख होते हैं।

तियं गतिं च को जीवो गुरो ! गच्छति भो घद ?

Question Oh Preceptor ! Tell me which being goes to the organic world ?

प्रश्नः—हे गुरो ! यह वतच्छास्त्रे कि तियं गतिं मे कौनसा जीव जाता है ?

आचारहीनो हि विचारशून्यो, मिथ्याप्रलापो च बहुप्रमादो  
अभक्ष्यभक्षी विपरीतवृत्ति-बहुभ्रमभोजी निज-वर्मचापः ॥  
दंभी च लोभा विषये निमग्नो, दानादिधर्माद्धि सदैव दूरः।  
पूर्वोक्तभावरिति यश्च युक्तः स एव गता च गतिं तिरश्चाम्

संस्कृतार्थः—यश्च सदाचारविरहितः, विवेकविहीनः, अति-प्रलापी, अपिप्रमादी, भक्ष्यभक्ष्यविवेकरहितः, बहुभ्रमभोजी, स्वधर्ममार्ग-

दूरः, अहंकारयुक्तः, सोमां, विषयविवे निमग्नः, सत्पात्रदानादि साक्षात्-  
पेक्षकः, मायाचारसहितः स च स्वोपासैः मावैस्तिर्यग्गतिं याति ॥५-६॥

The person goes to the organic world, who has renounced all customary observances, who is thoughtless, who tells a lie, who makes many mistakes, who eats prohibited articles, whose nature is crooked, who eats too much and who does not follow religion, who is a pretender, who is covetous, who is plunged in sensual objects, who always keeps aloof from duties like giving donation, etc. and one who has the bad qualities described above. (5-6)

अर्थः—जो पुरुष आधाररहित है, विचाररहित है, सदा विध्या बफवाद करता रहता है, अत्यंत प्रमादी है, अभक्ष्य भक्षण करनेवाळा है, अपनी प्रवृत्ति सदा धर्मसे विपरीत रखता है, जो अधिक अन्न भक्षण करनेवाळा है निजधर्मसे पराङ्मुख है, मायाचारी है, छोपी है, विषयोंमें सदा लीन रहता है और दानपूजा आदि धर्मसे सदा दूर रहता है, जो जीव ऊपर कहे अनुसार अधुभ भावोंको धारण करता है, उसे तिर्यच गतिमें जानेवाळा समझना चाहिए ।

प्रश्न—तिर्यच गतिमें कितने समयतक रहना पडता है ?

उत्तर—वहाँपर उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्य, और जघन्य अन्तर्मुहूर्त तक रहती है । और अपनी २ स्थित्यनुसार मध्यम विकल्प असंख्यात हैं ।

प्रश्न—वहाँ किस तरहके दुःख भोगने पडते हैं ?

उत्तर—वहाँ परार्थीनतासे उत्पन्न छंदन, भेदन बंधन आदि अनेक दुःख प्राप्त होते हैं । और समय २ में आधार पानादिक

का नहीं मिळना, तथा असह उष्ण, शीत आदि दुःख, मल-  
मूत्रादिके ऊपर ही सोना, उठना, बैठना, अपने दुःखोंको दुस-  
रेसे कहनेकी असमर्पता इत्यादि दुःख तीन पल्पतक भोगने  
पड़ते हैं। यह मनुष्य उपरोक्त प्रकारके भावोंकी तरतमतासे  
कुत्ता, चिल्ली, घोडा, गधा, हाथी आदि नाना प्रकारसे तिर्यक्  
होकर जन्म लेता है। अतः मायाचारादिक दुर्वासनां न करते  
हुए शुभभावोंसे अपना समय व्यतीत करना चाहिये।

मनुष्ययोनिं को ज्ञेयो यातीति यद् मो गुरो ।

Question.—Oh, preceptor, tell me which being is  
born as man.

प्रश्नः—हे गुरो । मनुष्ययोनिमें जाकर कौनसा जीव उत्पन्न होता है ?

यः स्वल्पलोभी विमलप्रवृत्तिः, संसारभीरुश्च दयार्द्रचित्तः ।

विनीतवृत्तिः समशान्तियुक्तो, धर्मप्रचारी च क्लृकर्मलोपी ॥

रुधि विधत्ते गुरुदेवशास्त्र, धर्मं सुदाने यजनेऽपि दक्षः ।

पूर्वोक्तभावैरिति यश्च युक्तः, स एव धीरो नरजन्मगामी ॥

संस्कृतार्थ—यश्च मानवः, स्वल्पसंतुष्टः, निर्मलाचारमार्गप्रवृत्तः  
संवेगपरायणः, दयालुः, विनयशीलः शान्तिसमतासाधकः, धर्मप्रभाव  
कोऽवर्मविरोधिश्च, देवगुरुश्रुतभक्तः, सद्गुरु सत्पात्रदाने तथा यजन-  
याजनादिके सरकार्ये दक्षः, धीरश्च श्रेयसात्तत्पथपरिणामवशमतः  
मनुष्यगतिं याति ॥ ७-८ ॥

That wise being is born as man, who covets little,  
who is pure, who fears the worldly affairs, who is  
kind in his heart, who is modest by nature, who is  
equally peaceful at all times, who spreads the religion,  
who destroys bad deeds, who takes interest in the  
preceptor, God and the religious books, who is diligent



in religion, in giving donation and in worshipping God and one who possesses the qualities described above. (7,8)

अर्थ—जो जीव बहुत ही कम लोभ करता है, जो अपनी मष्टिको सदा निर्मल रखता है, जो संसारसे भयभीत है, जिसका हृदय सदा दयालु बना रहता है, जो सदा विनयपूर्वक रहता है, जो समता और शान्तिको सदा धारण करता रहता है, धर्मका प्रचार करता रहता है, कृकर्मोंको नष्ट करता रहता है, देवशास्त्रगुरुमें सदा श्रद्धान धारण करता है, जो धर्म धारण करने, दान देने और पूजा करनेमें अत्यंत चतुर है। इस प्रकार के शुभ भावोंसे जो सुशोभित है वह धीरवीर मनुष्यगति में जाकर जन्म लेता है।

प्रश्न—मनुष्यगतिमें कितने काल तक रहना पड़ता है ?

उत्तर—भोगभूमिकी अपेक्षासे उत्कृष्ट तीन पर्य वर्ष, कर्मभूमि व विदेह क्षेत्रकी अपेक्षासे एक कोटी पूर्वकाल और जघन्य अन्तमुहूर्त्तकाल तक रहना पड़ता है। मध्यम विकल्प असंख्यात हैं।

प्रश्न—भोगभूमि किसे कहते हैं ?

उत्तर—जिस स्थानमें आसि, यासि, कृषि, वाणिज्यादि पदकर्मोंसे जीवनोपाय करनेकी आवश्यकता नहीं है, केवल भाजनांग भोजनांगादि दशविध कल्पवृक्षांसे इच्छित द्रव्य, घर, आहार, वर्तन इत्यादि सब भोगोपभोग मिलते हैं, ऐसे सुखमय स्थानोंको भोगभूमि कहते हैं।

प्रश्न—विदेहक्षेत्र किसे कहते हैं ?

उत्तर—जहाँ जीव असंख्यात वर्षकालके आयुको पाकर,

थी तीर्थंकरोंके चरणकमलोंकी साक्षान् सेवा कर, जोके बलि की योग्यता प्राप्त होती है उस विदेहक्षेत्र करने है। दर विदेह क्षेत्र इस जम्बूद्वीपके बीचमें है। वहाँपर अनवरत्न बनवा उठोइ होवा रहता है। और पुण्यजीव ही वहाँ उत्पन्न होते है। इस पंचमकालमें भरतक्षेत्रसे मुक्ति न होनेपर भी इस मनुष्य ब्रह्म विशिष्ट पुण्यसंचय करके विदेहक्षेत्रमें जन्म पाकर वहाँ करके मोक्ष जा सकते है। अतः भव्य प्राणियोंको शुभ मार्गदर्शक विदेहक्षेत्रमें जन्म लेनेका प्रयत्न करना चाहिए।

स्वर्गति कीदृशा जीवो याति भो सद्गुरो वद!

Question:—Oh, good priest! what kind of person goes to heaven?

प्रश्न:—हे गुरु! अब यह बातकाइये कि स्वर्गगतिमें किसकी प्रवृत्ति है?

भोगाच्छरीराच्च भवाद्भिरक्तो, देशधनी वा महाधनी वा सम्यक्त्वयुक्तश्चरमांगहीनः, स्वाध्यायव्रतपरायणः सद्गुरुनिजात्मशुद्धिं स्वपरोपकारं, कर्तुं सदा संयतः सद्गुरुः। पूर्वोक्तभावीरिति यदच युक्तः, स एव भवति सद्गुरुः।

संस्कृतार्थ—५२४ संसारभोगशरीरनिर्मुक्तः स्वध्यायं देश-  
व्रतं सक्रम्यतं वा गृहीतः, सद्गुरुसहितः, अर्थः व महाधनी वा,  
स्वाध्यायव्रतपरायणोऽपि लीनः, निजात्मविशुद्धिं स्वपरोपकारं च  
कर्तुं सदा उद्युक्तः, सः स्वोपास्यशुभमाशुभोदयेव समोऽपि ॥२०॥३॥३

Only that fortunate being who is free from enjoyment of body, who observes the five vows in some degree (संयतः) completely (महाव्रत), who believes against religious principles; who

religious books, who does penance, who always tries to keep his soul pure and tries to do good to others, and one who possesses the feelings mentioned above.

(9-10)

अर्थ—जो मनुष्य संसार शरीर और भोगोंसे विरक्त है, जो देशत्रती है वा सकलत्रती है, जो सम्यग्दर्शनसे सुशोभित है, परंतु जो चरमशरीरी नहीं है, जो स्वाध्यायमें लीन रहता है, तपश्चरणसे सुशोभित है और जो अपने आत्माकी शुद्धि, अपने आत्माका कल्याण तथा अन्य जीवोंका कल्याण करनेके लिए प्रयत्न पूर्वक सदा उद्योग करता रहता है, इस प्रकार जो ऊपर लिखे शुभ भावोंसे सदा सुशोभित रहता है वही भव्य स्वर्ग जानेवाला समझना चाहिए।

प्रश्न:—स्वर्गमें रहनेवाले जीवोंकी कितनी स्थिति है ?

उत्तर:—उत्कृष्टायु तेवीस सागर वर्ष, जघन्यायु दसहजार वर्ष और मध्यम विकल्प अनेक प्रकार है।

( सागरका ममाण नरकगतिके वर्णनमें कहा गया है )

प्रश्न:—स्वर्गमें कैसे सुख मिलते हैं ?

उत्तर:—स्वर्गमें अनेक देवांगना, अप्सरादि देवियोंसे उत्पन्न सुख देवगण भोगते हैं, वहाँ कृष्यादि आरंभक्रिया नहीं है। जब वहाँ उत्पन्न होते हैं सभी सोलहवर्षके युवकके समान उपपाद शय्यासे उठ बैठने हैं। सभी समय देवांगनाये रत्नवस्त्राभरणोंको लेकर दास दासी वगैरे आकर सामने खड़े होते हैं। दश विध कल्पवृक्षोंसे जो चाहे वस्तु मिलते हैं। जो सम्यग्दृष्टि देव हैं वे अपने विमानमें बैठकर अनेक तीर्थस्थान नंदीश्वर आदि

दीर्घों और जहाँ २ अकृत्रिम चेत्यालय है, वहाँ पहुँचकर बंदना करते हैं। विशेष पुण्यसे देवेंद्रपद मिळता है। सातिशय पुण्यसे यह जोव दमरे भवसे मोक्षको प्राप्त करने योग्य लौकिक देव या अहमिंद्र पदको प्राप्त करता है। अपना आयुमें छह महिने अवशेष रहनेपर उन देवोंको पुण्यपाला आभरणादिकांको कति कम हां जाती हैं, तब उनको अपरिमित दुःख हाता है। लेकिन सम्यग्दर्शियोंको यह दुःख नहीं होता है। सम्यग्दर्शनके फलसे स्वर्ग मिळता है। शुभकार्योंके फलसे भवनवासो आदि देव होते हैं। अतः सम्यग्दर्शन प्राप्त करके अतिशय पुण्य पाकर मोक्ष प्राप्तिके लिए मयत्न करना चाहिये।

• कीदृशः पुरुषो लोके मोक्षं गच्छति भो गुरो !

Question:—What kind of man obtains the final beatitude ?

प्रश्न—हे गुरो ! इस संसारमें कैसा मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है? महाव्रतं वा समितिं दधानो, निजात्मनिष्ठश्चरमांगधारी । कर्तुं स्वराज्यं यतते सदैव, स्वात्मानुभूत्यां स्वपदंऽस्ति लीनः । ध्यानैश्च शुक्रेण च कर्महंता-द्रष्टा प्रयोद्वा च निजात्मनो यः । पूर्वोक्तभावेरिति यद्यच्च युक्तः स एव योगी भुवि मोक्षभागी ॥

संस्कृतार्थ—यश्च मानवः पंचमहाव्रतं धारयन् पंचसमितिं पालयति, स्वप्मानंदमग्नः, चरमशरीरधारकः, स्वामपदं प्राप्तुं यतते, स्वानुभूतिं चानुभवति, शुक्रेणानानलेन कर्मधनं दहति, आत्मनो द्रष्टा प्रयोद्वा च सः स्वामज्ज्यविशुद्धमात्रबलेन मोक्षमाश्रयति तथा च अनंत-कालपर्यंतं परमानंदपरिपूर्णं स्वराज्यमधिगच्छति ॥ ११-१२ ॥

• Only that fortunate being on this world is fit

to get the final beatitude, who observes the five vows completely, or who follows the five rules of behaviour (समिति), who is absorbed in his soul, who follows the religious principles, who always tries to get independence, who is inclined in his own experience and his own position (Station), who destroys the evil deed by his pure meditation, who sees and advises his own soul, and one who possesses the things mentioned above.

(11-12)

अर्थ:—जो मुनि महाव्रत व समितिको धारण करते हैं, जो अपने आत्मामें सदा निमग्न रहते हैं, चरमशरीरी हैं, जो मोक्षरूप स्वराज्य प्राप्त करनेके लिए सदा प्रयत्न करते रहते हैं स्वात्मानुभूति और स्वात्मपदमें सदा लीन रहते हैं। जो शुद्ध ध्यानके द्वारा कर्मोंको नाश करनेवाले हैं और अपने शुद्ध आत्माके ज्ञाता द्रष्टा हैं, इस प्रकार जो मुनि शुद्धभावोंसे सुशोभित हैं वे ही मुनि इस संसारमें मोक्ष जाते हैं।

प्रश्न—मुनियोंके आवश्यकीय मूळगुण कितने हैं ?

साधुके लिए निम्न लिखित अष्टाईस मूळगुणोंका पालन करना अनिवार्य है।

- [१] अहिंसा महाव्रत—पूर्ण अहिंसा धर्मका पालन करना  
 [२] सत्यमहाव्रत—पूर्ण सत्यधर्मका पालन करना, [३] अस्तेय महाव्रत—पूर्ण अस्तेयधर्मका पालन करना, [४] ब्रह्मचर्यमहाव्रत—पूर्ण ब्रह्मचर्यधर्मका पालन करना, [५] अपरिग्रहमहाव्रत—पूर्ण अपरिग्रहधर्मका निर्वाह करना, [६] ईर्यासमिति—प्रयोजन जंतुरहित मार्गसे चार हाथ जमीन देखकर चलना, [७]

भाषासमिति—निर्दोष वचन बोलना, [ ८ ] एषणासमिति—  
 शृद्धमोजन जो गृहस्थने अपने लिए तयार किया हो, उसे मित्रा  
 रूपसे भक्ति एवं निःस्वार्थ भावसे दिये जानेपर ही केना [ ९ ]  
 आदाननिक्षेपणा समिति—अपना शरीर और अन्य वस्तु जो  
 कुछ भी हो, उसे देख-भाळकर उठाना एवं रखना, [ १० ] प्रसंग  
 समिति—पक्षमूत्रादिका त्याग आवश्यक स्थानमें करना [ ११ ]  
 षष्टिनिरोधव्रत—सुंदर और असुंदर दर्शनीय वस्तुओंमें रागद्वेष  
 तथा आसक्तिका त्याग करना, [ १२ ] करणेंद्रियनिरोधव्रत—  
 सुंदर और असुंदर स्वरमें विरक्ति एवं आसक्तिका परिहार [ १३ ]  
 प्राणेंद्रियनिरोधव्रत—सुगंध तथा दुर्गंधमें राग-द्वेषको त्याग  
 करना, [ १४ ] रसनेंद्रियनिरोधव्रत—जिह्वाको छालुपताका रोक  
 करना [ १५ ] स्पर्शनेंद्रियनिरोधव्रत—मृदू रूक्ष आदि भ्रष्ट वस्तु  
 के दुःख अथवा सुखरूप स्पर्शमें हर्ष विषादसे बंधित रहना [ १६ ]  
 सांपायिक—जीवन-मरण, संयोग-वियोग, सुख-दुःख आदि  
 में राग-द्वेष रहित समभाव रखना [ १७ ] स्तवन [ १८ ] ईशना,  
 [ १९ ] प्रतिक्रमण—किये गये दोषोंको शोधना [ २० ] श्लेषानु-  
 आगामी कालके लिए अयोग्यवस्तुका त्याग करना [ २१ ]  
 कायोत्सर्ग, [ २२ ] केशछोच—तीन चार माहिने ईश्वर वपमान  
 पूर्वक अपने हाथसे मस्तक एवं मूछके बालोंको छोटना [ २३ ]  
 नम्रता—बद्ध, चर्म, तृण आदिसे शरीरको न दबा अथवा  
 दिगम्बर वेषमें जीवन बिताना [ २४ ] धम्मार—श्यान, वस्त्र  
 अंजन लेपन आदिका त्याग करना [ २५ ] शिष्टव्रत—  
 विवाहारहित गुप्त प्रदेशमें दण्ड अथवा धनुष स्थान  
 छोटे समयके लिए सोना [ २६ ]

मंजन आदिसे दंतघावन नहीं करना [२७] स्थितिभोजन—अपने हाथोंको पात्र बनाकर दीवाल आदिका सहारा न लेकर चार अंगुलके अंतरसे सम-पाद खड़े होकर शुद्धतासे आहारग्रहण करना [२८] एकभुक्त—सूर्यके उदय और अस्तकालकी तीन घड़ी छोड़कर एकबार भोजन करना ।

इस प्रकार अष्टाईस मूलगुणोंको धारणकर पंद्रह परीषहोंको भी शांत हृदयसे जानना चाहिए ।

प्रश्न:—मोक्ष किसे कहते हैं ?

उत्तर:—यह आत्मा जब ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंको नाश कर, इस संसारबंधनसे पार होकर, अनंतज्ञान, अनंतदर्शनादि आठ जो गुणोंको प्राप्त करता है उसे मोक्ष कहते हैं । श्रीउपा-स्वामी आचार्यश्रीने ऐसा कहा है कि 'कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः' यह मोक्ष लोकके अग्रभागमें है । उस स्थानको प्राप्त करनेपर यह जीवात्मा परमात्मा हो जाता है । वह फिर जन्ममरणरूप संसारमें आकर दुःख नहीं भोगता है । उस स्थानको प्राप्त करनेके बाद राग, द्वेष, मद, मात्सर्यादि विकार उस आत्मामें उत्पन्न नहीं होते हैं । जिस प्रकार एक बीजको जलानेपर फिर उसमें अंकुरोत्पत्तिकी योग्यता नहीं रहती है, तद्वत् उस आत्मा में रागद्वेषादि विकारभाव उत्पन्न नहीं हो सकते हैं, अन्य संग्रदायवाले मोक्ष पदार्थको स्वीकार तो करते हैं, परन्तु फिर वहाँसे कभी न कभी इस संसारमें जावको आना पड़ता है ऐसा कहते हैं । यदि यह बात है तो उसे वह यथार्थ सुख नहीं है । क्योंकि उसके बाद दुःख समुद्रमें फिर पड़ना पड़ता है । परन्तु

अनेकावधारी (जिन) मोक्षके स्वरूपको ऐसा नहीं मानते हैं।  
 जैनमतके अनुसार परमात्मा अनंतानंतकाष्ठतक परपामंद्यदश  
 पर होकर सुख भोगता है।

ऐसे परम पवित्र स्थानको प्राप्त करना इसके अनुभवका  
 कर्तव्य है और उसके लिए अवश्य ही मयत्न करना चाहिए। परी  
 आत्मकल्याणकी व जीवात्माकी उन्नतीकी पराकाष्ठा और  
 आदिम ध्येय है।

आत्मकल्याण चाहनेवाले भक्त भीव सद्गुरुमार्गके साद-  
 र्भूमि जाकर सद्गुरुको श्रवण करे एवं आत्मकल्याणके साधक  
 मार्गका अवलंबन करे। यह आत्मा अनादिद्वेषके दूरकर  
 होकर क्रीडादि विकारोंमें सुखामुभव करता हुआ जाता है।  
 आत्माको उन कर्मोंसे मुक्त होनेके लिए एक निश्चय है।  
 उसे ही काष्ठशक्ति कहते हैं। केवल आत्म हीनता सोच-  
 नेसे मोक्ष नहीं भिद्यता है। उसके लिए देवपूजा, इत्यादि,  
 स्वाध्याय, संयम, तप, स्तोत्र आदि शुभकार्योंके सम्यक्  
 प्रवर्तन करना चाहिए। अनेक मर्मोंमें ईर्ष्या, द्वेष, शत्रु-  
 त्व, कायबलेश करके मनश्चनादि तपोंका प्रवर्तन करना  
 चाहिए। ये सब आत्मामें विद्यमान कर्माणि नन्दरिपति  
 करनेके लिए और शुभपरिणामोंके वर्धनके कारण हैं।  
 शुभपरिणामोंकी वृद्धिसे आत्मके अशुभकर्मोंका नाश होकर  
 उसमें निर्मलज्ञानका विकास होता है। यह विकास ही  
 परमात्माको संसारकी परिस्थितिका परिहार है।  
 यह आत्मा तत्त्वविचार करके आत्मा और परमात्मा  
 होने लगता है और उसे देहादि पदार्थोंके अलग होकर



ज्ञानादिगुण शाश्वत और उपादेय इस प्रकारका ज्ञान होता है परव्यामोहसे खोये हुए निज गुणोंको प्राप्ति करनेके लिए गुरुओंके उपदेशानुसार प्रयत्न करता है। आगममें वर्णित मार्गसे कर्मपरतंत्रताको दूर करके आत्माके निजगुणोंको प्राप्ति करता है। इसी अवस्थाको मोक्ष वा स्वराज्य कहते हैं। ऐसे स्वराज्यको प्राप्ति करनेके लिए हर एक भव्यमाणी अनवरत अवश्य प्रयत्न करे।

स्वराज्य प्राप्तिके सरल मार्गको " लघुबोधामृतसार " में विस्तारसे वर्णन किया है, वहाँसे ज्ञान लेना चाहिए। यहाँपर संक्षेपसे दिग्दर्शन मात्र किया है।

इस प्रकार परमरूप, प्रातःस्मरणीय, विश्वबंध, नरोद्भव, चारित्रचूडामणि आचार्य श्रीकुंथुसागर महाराज—  
विरचित लघुबोधामृतसार समाप्त हुआ।

समाप्तः ।



श्री १०८ आचार्य कुंथुसागर महाराजकी

★ पूजा. ★

[ स्थापना—वैद्यराम पं. आनंददासजी मंगं ।

स्थान—( अरिष्ट छन्द )

घन्य पही घन्य भान घन्य मम भाग्यकी,  
 देव कुन्धु छवि परम सौम्य गुरुदेवकी ।  
 हित-उपदेशों विष्ट धेष्ट भाषण करे,  
 भक्तिगण सुनत हृदयमे आनन्द अति भरे ॥१॥  
 भवदधि तारण उच्चम तरणि बसानिये,  
 हृदयपुष्पमे आय कर्मरिषु भानिये ।  
 आह्वानन संस्थापन सन्निधिकरणभी,  
 रत्नप्रिय यशदान देव भक्ति शरणभी ॥२॥

ॐ श्री आचार्यवर श्रीकुंथुसागर स्वामिन् अप्र अपतर  
 अपतर संशोपद् । इवाह्वानमन् । अप्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।  
 अप्र मम सन्निहितो भव भव दपद् सन्निधिकरणं ।

सीरोदाधि सम वनहार, शीतल सुखकारी,  
 श्री गुरु द्विग नीर खटाव, जनम जरा टारी ।  
 श्री कुन्धुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,  
 ... मिल सप नरनारी ॥३॥

ॐ श्री श्री आचार्यवरश्रीकुन्धुसागरस्वामिने जन्मजगामृत्यु-  
विनाशाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

केशर कर्पूर मिळाय, चंदन संग घसें,  
भारि मिळ सव आन चढाय, भव आताप नसे ॥  
श्रीकुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,  
आनंदसे पूजे आज, मिळ सव नरनारी ॥२॥

ॐ श्री श्रीआचार्यवर श्रीकुन्धुसागरस्वामिने संसारताप-  
विनाशाय दिव्यचंदनं ।

शुभ तंदुळ चंद्र सपान, असय मुखकारे,  
चरणोंपे पुझ चढाय, सब ही दुख टारे ।  
श्री कुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,  
आनंदसे पूजे आज, मिळ सव नरनारी ॥३॥

ॐ श्री श्रीआचार्यवरश्रीकुन्धुसागरस्वामिने अक्षयपदमाप्तये  
दिव्याक्षतं ।

चम्पा अह जुही गुलाब, गेंदा मरुवाके,  
ये काम-पाण नश जाय, भेट घरुं लपाके ।  
श्री कुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,  
आनंदसे पूजे आज मिळ सव नरनारी ॥४॥

ॐ श्री श्रीआचार्यवरश्रीकुन्धुसागरस्वामिने कामवाणविना-  
शाय दिव्य पुष्पं ।

ले घेवर वापर आदि, फेनी याल भरें,  
यह क्षुधा वेदनी नाश, गुरुसे विनय करे ।  
श्रीकुंथुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,  
आनंदसे पूजे आज, मिळ सव नरनारी ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुण्डुसागरस्वामिने क्षुधाभोगविना-  
शाय दिव्यनैवेद्यं ।

मणिमय दीपककी राशि, सबही तिमिर कटे ।

हो जगमग ज्योति अपार, ज्ञानकला प्रकटे ।

श्री कुण्डुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,

आनंदसे पूजे आज, मिछ सब नरनारी ॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुण्डुसागरस्वामिने मोहान्धकार-  
विनाशाय दिव्यदीपं ।

छे मनहर धूप अनूप, हुताग्नि सेप करे,

चमु कर्म काष्ठ जर जाय, सब मिछ अर्घ करे ।

श्री कुण्डुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,

आनंदसे पूजे आज, मिछ सब नरनारी ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुण्डुसागरस्वामिने अष्टसर्गदहनाय  
दिव्यधूप ।

श्रीफळ अरु दाख बदाय, विस्ता सुखकारे,

शिवतियके पावन हेतु, ल्यावे अति प्यारे ।

श्री कुण्डुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,

आनंदसे पूजे आज, मिछ सब नरनारी ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यवरश्रीकुण्डुसागरस्वामिने मोक्षकण्ठप्राप्तये  
दिव्यकण्ठं ।

जल चंदन असत पुष्प, नेवज अति ताजे,

छे दीप धूप फळ, अर्घ 'आनंद' अष्टभाजे ।

श्रीकुण्डुसिंधु गुरुदेव, जगके हितकारी,

आनंदसे पूजे आज, मिछ सब नरनारी ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्यवरश्रीकुण्डुसागरस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये  
दिव्यार्घ्यम् ।

## अथ जयमाला

— दोहा —

कुन्धुसिंधु गुरुवर महा, जग जनके प्रतिपाल ।  
हर्षित हो आनंद युत, गावें गुण गण माल ॥

पद्धरी छन्द.

जय कुन्धुसिंधु गुरुवर मुजान,  
आत्म हित तप करते महान ।  
जय तेरह विष चारित्र पाळ,  
भवसिंधु तार गुरुवर दयाळ ॥१॥

जय उत्तम शुभ दश धर्म पाळ,  
भवि जन कखि छवि होते निहाळ ।  
जय जय जिनमत दीक्षा सुधार,  
निर्भय निशंक करते विहार ॥२॥

जय ध्यान मुथिर मुद्रा मुदेख,  
भविगण सब घेटत कर्म रेख ।  
जय राग द्वेष चितमें न ठान,  
धर्मामृत वर्षायो महान ॥३॥

जय बोधामृत वर ग्रंथ जान,  
की ज्ञानामृत रचना मुखान ।  
चतुर्विंशति आदि अनेक ग्रंथ,  
संस्कृतमें जो कल्याण पंथ ॥४॥

जय धन्य धन्य श्री कुन्धु पाळ,  
मनमोहक रचना की विशाल ।

जय धर्म धर्म में बहुत प्रवीण,  
 लखि ज्ञान सभा आश्चर्य कीन ॥५॥

जय क्रोध मान माया विहीन,  
 अरु मोह रोगको करत छीन ।  
 भवसागरमें हैं दुख अपार,  
 तिनको तुम भेटो जगतपाल ॥ ६ ॥

जय ऐनापुरमें जन्म ठान,  
 सातप्पा श्रीके रत्न खान ।  
 जय धन्य सरस्वती देवि माय,  
 श्रीगान्तिशिरोमणि मुगुरु पाय ॥ ७ ॥

जय शिवसुंदरि को करत ध्यान,  
 सच ही को देते ज्ञान दान ।  
 जय भारतवर्ष विहार कनि,  
 श्रावक बोधे किरिया विहीन ॥ ८ ॥

जय परम घुरंधर धर्म खान,  
 चपकायो जिन वृष किरण मान ।  
 उपदेशामृत से सींच सींच,  
 संबोधे भवि जन खींच खींच ॥ ९ ॥

जय जय जग विभू करुणा निधान,  
 गुरु सुखद मूर्ति गुण पुञ्ज खान ।  
 उपकार किये जगके विशेष,  
 बहु गुण गायें गुणिजन हमेश ॥ १० ॥

जय धर्म दिवाकर रत्न खान,  
 भो गुरु पिध्यातम हरन मान ।

जय मन्मथ-हारी परम धीर,

वर्षाया जगमें धर्म नीर ॥ ११ ॥

जय साधु सुपदका मन्त्र जाप,

मंगल उत्तम हैं शरण आप ।

संसार कष्टको करत नाश,

सय पूरे मन बाँधित जु आश ॥ १२ ॥

जय विश्व उधारन दुख निवार,

सय सपन कर्म को करत धार ।

जय जय जयवंतो गुरुदयाळ,

श्री कुंभु सिंधु गुरुवर विशाळ ॥ १३ ॥

जय बलिहारी गुणगण कृपाल,

सय राव रक आ नमत भाळ ।

जय चरणवंदना करत आन,

राजा महाराजा भक्ति गान ॥१४॥

तव गुणमहिमा अद्भुत अपार,

हम अल्पबुद्धि किम लहे पार ।

आनंददास चिर नमत भाळ,

मेढो गुरुवर ये दुखद जाळ ॥ १५ ॥

संसार विषय ये खार खार,

दुक चरण विनय कोजे उबार ।

पूजे पंदे मन वचन काये,

जळ गंधादिक वसु द्रव्य व्याप ॥१६॥

जय आदि सिंधु मुनिराय चीन ।

श्रीगुरु सेवा भक्ति करन छिन-

जय अजित सिंधुगुणघर महान ।

श्रीदेवसिंधुमुनि गुणगण निधान ॥ १७ ॥

ऐष्टकवर बाहुचछा महान,

प्रह्लाचारो जिनदाम मुजान ।

सब संघसहित करते विहार,

भवि जीवनके जीवन सुघार ॥ १८ ॥

घत्ता.

जय गुणगण मद्रा घर्म समुद्रा, आतम मुद्रा सुखकारी ।

श्रीकृष्ण तपोधन, कर्म हनो मम पूजत भवि जन हितकारी १९

॥ इति पूर्णार्घ्यम् ॥

घत्ता.

जे पूज रक्षाघे गुणगण गावे, आतम घ्याघे नर नारी ।

ते पुण्य घटावे शिवपुर जावे, आनंदपावे अत्रिकारी ॥२०॥

॥ इत्याशीर्वाद ॥

घोर तपस्वी श्रेष्ठ मुनि, आदिसिंधु मुनिराज,

अर्घ्य छेय पूजा करूं, पार करो गुरुराज ।

ॐ श्री मुनि आदिसागरस्वामिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अजितसिंधु मुनिराजको, पूजो अर्घ्य घटाय,

पुण्यवृद्धि हो जगतमें पाप सर्व नसि जाय ।

ॐ श्री मुनि श्रीअजितसागराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

देवसिंधु मुनिराजको चरणनि अर्घ्य घटाय ॥

में पूजो शुभभांघते दुष्ट कर्म नसि जाय ॥

ॐ श्री देवसागराय अर्घ्यं नि



## अफरती.

जय कुंथुस्वामी गुरु जय कुंथुस्वामी ।  
 आरती करुं तुम चरणे, आरती करुं तुम चरणे ।  
 निशदिन शिशु नामो, जय देव जय देव ॥१॥  
 ऐनापुर नगरी मध्ये, सातप्पा पिता, गुरु सातप्पा पिता ।  
 माता सरस्वति कूखे [ २ ] जनम्या गुरुदाता ।  
 जयदेव जयदेव, जय कुंथु स्वामी । जयदेव ॥२॥  
 शांति-सागर श्री गुरुचरणे शिशु नामी गुरु चरणे  
 शिशु नामी ॥  
 आप धयो बैरागी [ २ ] सद्गुणना धामी ॥  
 जयदेव जयदेव, जय कुंथुस्वामी ॥ जयदेव ॥३॥  
 दीक्षा लीधी गुरुदेवा-आभव जलतरवा-गुरु थाभव  
 जलतरवा ॥  
 ज्ञानामृत धरसावो [ २ ] शिवरमणी वरवा । जयदेव  
 जयदेव, जय कुंथुस्वामी । जयदेव ॥४॥  
 बोधामृत ज्ञानामृत-ग्रंथ नवीन सारो ( गुरु )  
 राधिया पूरण प्रांते [ २ ] सुद्गुणना धारी । जयदेव.  
 जयदेव जय कुंथुस्वामी—जयदेव ॥५॥  
 व्याख्यानो विधाविध, आप सदा करता ( गुरु )  
 सौ समाज दुख हरता ( २ ) बाणी उचरता । जय. जय.  
 जय कुंथुस्वामी—जयदेव ॥६॥  
 श्रीगुरुनी सेवा—जे भावे करता [ गुरु ]  
 कहे चुनीलाळ सेवक ( २ ) भवसंकट हरता । जयदेव.  
 जयदेव जय कुंथुस्वामी—जयदेव ॥ ७ ॥

==\* निवेदन \*==

श्री श्रीआचार्य कुयुसागर ग्रंथमालाके  
उत्तमोत्तम सर्व प्रयोजका स्वाध्याय  
करना चाहते हैं वे (१०१) देकर  
ग्रंथमालाके स्थायी सदस्य बनें।  
स्वार्थसदस्योंको ग्रंथमालासे  
प्रकाशित व प्रकाश्य सभे ग्रंथ  
बिनामूल्य दिये जाते हैं।

निवेदक—

मंत्री—आचार्य कुयुसागर ग्रंथमाला  
सोलापुर.